इकाई 1 वित्तीय प्रबंध : एक सिंहावलोकन

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 वित्तीय प्रबंध का विकास

1.3 वित्तीय प्रबंध की प्रकृति

1.4 वित्त और अन्य संबंधित विषय

1.5 वित्तीय प्रबंध के उद्देश्य

1.6 जोखिम और प्रत्याय समंजन

1.7 वित्त प्रबंधक की भूमिका

1.8 सारांश

1.9 शब्दावली

1.10 स्वपरख प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, आप इस योग्य हो सकेंगें कि:

- वित्तीय प्रबंध के विकास को समझ सकें;
- वित्तीय प्रबंध की प्रकृति और व्यापकता को समझ सकें;
- अन्य विषयों के साथ वित्त के संबंध पर चर्चा कर सकें;
- वित्तीय प्रबंध के उद्देश्यों को समझ सकें;
- वित्तीय प्रबंधक के कार्य का आकलन कर सकें; तथा
- जोखिम और प्रत्याय के समंजन की संकल्पना की व्याख्या कर सकें।

1.1 प्रस्तावना

किसी भी व्यावसायिक संगठन का मुख्य उद्देश्य लाभ अर्जित करना होता है चाहे वह निर्माण संगठन हो या सेवा संगठन। किसी भी व्यवसाय या किसी भी गतिविधि के लिए किसी विशेष समय पर वित्तीय संसाधनों के आवश्यकता होती है। किसी भी संगठन के लिए वित्तीय संसाधनों को इनके इष्टतम उपयोग के लिए उन्हें नियोजित, निर्देशित, निरीक्षण, संगठित और नियंत्रित करने की आवश्यकता होती है। यहीं से वित्तीय प्रबंधक की भूमिका सामने आती है। अब प्रश्न उठता है कि वित्तीय प्रबंध क्या है? यदि हमें इसे समझाना है तो हम इसे 'वित्त' और 'प्रबंध' में अलग कर सकते हैं। जब हम इन शब्दों को जोड़ते हैं तो यह वित्तीय प्रबंध बनता है।

वित्त + प्रबंध = वित्तीय प्रबंध

हम कह सकते हैं कि जब वित्तीय संसाधनों को प्रबंध कार्यों के साथ जोड़ दिया जाता है, तो यह वित्तीय प्रबंध बन जाता है। इस इकाई में हम वित्तीय प्रबंध के विकास, इसकी प्रकृति और व्यापकता, उद्देश्यों, जोखिम प्रत्याय समंजन और वित्तीय प्रबन्धक की भूमिका के विषय में सीखने जा रहे हैं।

1.2 वित्तीय प्रबंध का विकास

इससे पहले कि हम वित्तीय प्रबंध के विकास पर चर्चा करें, मुद्रा और वित्त के बीच के अंतर को समझना महत्वपूर्ण है।

मुद्रा (Money) क्या है?

यह एक भौतिक रूप है जो किसी राष्ट्र की मुद्रा के संदर्भ में होता है। लेकिन मुद्रा के डिजिटलीकरण के साथ डिजिटल मुद्रा भी प्रस्तुत की गई है और ऐसी धन भौतिक रूप में नहीं है। यद्यपि, हम मुद्रा को उसके पारंपरिक रूप में ही मानेंगे। मुद्रा का उपयोग किसी वस्तु को खरीदने के लिए किया जाता है, चाहे वह किसी व्यक्ति द्वारा हो या किसी संगठन द्वारा या किसी राष्ट्र द्वारा। इसे उपयोग किया जा सकता है:

- परिसंपत्ति
- किराने का सामान
- वस्त्र
- अन्य सामान आदि क्रय करने के लिए।

मुद्रा और वित्त के बीच अंतर

आइए अब हम मुद्रा और वित्त के बीच मूल अंतर को समझते हैं। मान लीजिए कि आपके पास 10,000 रुपये हैं, आप अपनी दैनिक आवश्यकताओं जैसे किराना, सब्जियां, कपड़े आदि पर खर्च करते हैं। इस मामले में आप इसे मुद्रा कहते हैं। अब, आपके पास बचत के रूप में 10,000 रुपये भी हैं और आप इसे सावधि जमा में निवेश करना चाहते हैं। इस मामले में यह वित्त बन जाता है। इसलिए हम कह सकते हैं कि जब मुद्रा हाथ में होती है और बिना प्रत्याय (रिटर्न) दिए खर्च की जाती है तो इसे 'मुद्रा' के रूप में जाना जाता है और जब इसे किसी प्रकार की परिसंपत्ति में इस आशा के साथ निवेश किया जाता है कि इससे कुछ प्रत्याय जुड़ा होगा तो इसे 'वित्त' कहा जाता है।

इसलिए, वित्त की पूरी अवधारणा उचित निर्णय के साथ मुद्रा का प्रबंध है। वित्त के इस प्रबंध को वित्तीय प्रबंध के रूप में जाना जाता है।

आइए अब देखें कि वित्तीय प्रबंध एक अध्ययन के विषय के रूप में कैसे विकसित हुआ। 1990 के दशक के आरंभ में वित्तीय प्रबंध एक अलग क्षेत्र के रूप में उभरा और लेखांकन से अलग एक अध्ययन का विषय बन गया। तीव्र औद्योगीकरण और प्रतिस्पर्धा में वृद्धि से उत्पन्न जटिल परिस्थितियों के कारण पृथक अध्ययन का विषय की आवश्यकता अनुभव की गई। वित्तीय प्रबंध के विकास को समझने के लिए इसे तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है। ये हैं:

1 पारंपरिक अवस्था

2. माध्यमिक अवस्था

3 आधुनिक अवस्था

1. **पारंपरिक चरण (1900–1940):** पहले के समय में वित्त का अर्थ मूल रूप से विभिन्न तरीकों और साधनों के माध्यम से फंड (कोष) प्राप्त करने का प्रयास करना था। फंड को वित्तपोषण के विभिन्न स्रोतों के माध्यम से प्राप्त किया जाता था (इसे हम इकाई 3 में सीखेंगे) जैसे ऋण, शेयर, डिबेंचर आदि। इसमें मूल रूप से संगठन की आवश्यकताओं का आकलन करना और उसके अनुसार फंड की व्यवस्था करना शामिल था। दीर्घकालिक स्रोतों और लेखांकन पहलुओं पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया था। यह अवस्था करीब चार दशक तक चली। वर्षों से चली आ रही इस अवधारणा का उपयोग कम होता चला गया। क्योंकि इसमें निर्णय लेने की प्रक्रिया शामिल नहीं है। वित्तीय प्रबंध की अवधारणा कुछ वर्षो के दौरान विकसित हुई और माध्यमिक अवस्था की ओर ले गई।

2. **माध्यमिक अवस्था (1940–1950):** यह पारंपरिक अवस्था के समान था। इस अवस्था में दिन–प्रतिदिन की समस्याओं को महत्व दिया गया और योजना, विश्लेषण और नियंत्रण भाग पर ध्यान केंद्रित किया गया। इस अवस्था के दौरान धीरे–धीरे निर्णय लेने पर बल दिया जाने लगा। इससे आधुनिक अवस्था का विकास हुआ।

3. **आधुनिक अवस्था (1960 से वर्तमान):** यह अवस्था पारंपरिक अवस्था का विस्तार है जहां प्राप्त धन को इष्टतम उपयोग के लिए रखा जाता है। यह अवस्था शेयरधारकों की संपदा को अधिकतम करने पर अधिक ध्यान केंद्रित करता है। यह दृष्टिकोण अधिक तार्किक और तर्कसंगत है क्योंकि इसमें वित्तीय प्रबंधक की ओर से निर्णय लेना शामिल है।

इन तीन अवस्थों ने दो दृष्टिकोणों का आगमन किया है जो हैं:

परंपरागत दृष्टिकोण

आधुनिक दृष्टिकोण

पारंपरिक दृष्टिकोण केवल कोषों की प्राप्ति (procurement) पर केंद्रित है जबकि आधुनिक दृष्टिकोण इसके इष्टतम उपयोग के साथ–साथ कोषों की प्राप्ति पर केंद्रित है।

1.3 वित्तीय प्रबंध की प्रकृति

वित्त किसी भी व्यावसायिक संगठन की जीवन रेखा है। किसी भी संगठन के लिए कोषों की प्राप्ति और उसका कुशल उपयोग बहुत महत्वपूर्ण है। किसी भी संगठन को वित्त क्या, कहाँ, कैसे और कब यह तय करना होता है। इस पर ध्यान देना चाहिए:

– कोषों की आवश्यकता क्यों है?

– कोषों को प्राप्त करने के लिए किन स्रोतों का उपयोग किया जा सकता है?

– कोष कहां से प्राप्त किए जायेगें?

– इष्टतम उपयोग के लिए कोषों को कैसे वितरित किया जाएगा?

– संगठन को अधिक कोष प्राप्त करने की योजना कब बनानी चाहिए?

वित्त कार्यों में उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर देना शामिल है। इसलिए, हम कह सकते हैं कि वित्तीय प्रबंध के प्रमुख तत्व हैं:

1. योजना
2. संसाधनों का आवंटन
3. संसाधनों का प्रबंधन
4. नियंत्रण

वित्तीय प्रबन्ध को विभिन्न लेखकों विद्धानों द्वारा इस प्रकार परिभाषित किया गया है इज़रा सोलोमन के अनुसार "वित्तीय प्रबन्ध का संबंध महत्वपूर्ण आर्थिक साधनों तथा पूंजीगत कोष के कुशलतम उपयोग से होता है। यह कोष के उपयोग तथा प्राप्ति में शामिल समस्याओं का अध्ययन है"

वेस्टन और ब्रिघम के अनुसार – "वित्तीय प्रबन्ध वित्तीय निर्णय लेने, व्यैक्तिक प्रयोजन तथा उधम के लक्ष्यों को सुसंगत करना है।"

फिलिपेटन ने वित्तीय प्रबंध का विस्तृत अर्थ दिया है। उनके अनुसार "वित्तीय प्रबन्ध उन प्रबंधकीय निर्णयों से संबंधित है जिनका परिणाम संगठनों के लिए लघु तथा दीर्घ अवधि के ऋणों को प्राप्त करना तथा वित्तीयन होता है।

इसलिए वित्तीय प्रबंध को एक प्रबंध निर्णय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप फंडो की प्राप्ति इसके इष्टतम उपयोग के साथ होती है। वित्तीय प्रबंध की प्रकृति में निम्नलिखित कार्य शामिल हैं:

1. निवेश निर्णय
2. वित्तीय निर्णय
3. लाभांश निर्णय

निवेश निर्णयः वित्तीय प्रबंध के इस कार्य में परिसंपत्ति का उचित चयन शामिल है जहां निवेश किया जाएगा। यह दो व्यापक शीर्षों के अंतर्गत किया जा सकता है:

– दीर्घावधि परिसंपत्तियां

– अल्पावधि या चालू परिसंपत्ति

लंबी अवधि की परिसंपत्ति भविष्य में एक लम्बी अवधि के दौरान प्रत्याय देती है जहां अल्पावधि परिसंपत्ति सामान्यता पर एक वर्ष के भीतर रोकड़ में परिवर्तित हो जाती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि

– दीर्घावधि परिसंपत्तियों को पूंजीगत बजटिंग के रूप में जाना जाता है

– अल्पवधि परिसंपत्तियों को कार्यशील पूंजी प्रबंध के रूप में जाना जाता है

इन दोनों अवधारणाओं का अध्ययन आप आगे की इकाइयों में करेंगे।

वित्तीयन निर्णयः निवेश निर्णय का उचित परिसंपत्ति मिश्रण के विचार किया जाता है जबकि वित्तीयन निर्णय वित्तीयन मिश्रण से संबंधित होता है। इसे पूंजी संरचना के रूप में भी जाना जाता है। यह फंड प्राप्त करने के समय ऋण के अनुपात को संदर्भित करता है। स्वामी के कोष तथा बाहरी कोषों तथा लघुअवधि और दीर्घाविधि कोषों में संतुलन होना चाहिए। फर्म को बाहरी और आतंरिक कोषों का उपयोग करना पड़ता है और इन साधनों के विभिन्न मिश्रण को लीवरेज कहते हैं। वित्तीय निर्णयों में निम्नलिखित दो पहलू शामिल हैंः

– पूंजी संरचना सिद्धांत

– पूंजी संरचना निर्णय

लाभांश निर्णयः वित्तीय प्रबंध का तीसरा कार्य लाभांश नीति से संबंधित है। इस में फर्म के वित्तीय निर्णयों से संबंधित लाभांश का विश्लेषण किया जाता है। फर्म के पास दो विकल्प उपलब्ध हैंः

– लाभ प्रतिधारित रखना

– शेयरधारकों को लाभांश के रूप में लाभ वितरित करना

फर्म द्वारा निम्नलिखित पहलुओं को ध्यान में रखते हुए उचित निर्णय लिया जाता हैः

– लाभांश भुगतान अनुपात

– शेयरधारकों की वरीयता

– फर्म के लिए निवेश के अवसर

1.4 वित्त और अन्य संबधित विषय

वित्त को दो व्यापक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। ये हैंः

– सार्वजनिक वित्त

– निजी वित्त

सार्वजनिक वित्त सरकार से संबंधित विषयों से संबंधित है। यह केंद्र या राज्य सरकार या सरकारी संस्थान हो सकते हैं। यह उन कोषों से संबंधित है जो करों आदि के माध्यम से जुटाए जाते हैं। सार्वजनिक वित्त का मुख्य उद्देश्य लाभ अर्जित करने की अपेक्षा सामाजिक या आर्थिक उद्देश्यों को संबोधित करना है।

दूसरी ओर निजी वित्त में सरकारी संस्थानों के सिवाय अन्य निकायों के वित्त, व्यक्तिगत वित्त, व्यावसायिक वित्त शामिल हैं।

आइए अब अन्य विषयों के संबंध में वित्तीय प्रबंध पर चर्चा करें। मूल रूप से दो विषय हैं जैसे अर्थशास्त्र और लेखांकन जो वित्तीय प्रबंध से निकटता से संबंधित हैं। वास्तव में यह कहा जा सकता है कि वित्तीय प्रबंध वास्तव में इन दो विषयों से उभरा है।

वित्तीय प्रबंध और अर्थशास्त्र

अर्थशास्त्र को सूक्ष्म अर्थशास्त्र और वृहत अर्थशास्त्र में विभाजित किया जा सकता है। वृहत अर्थशास्त्र व्यापक अवधारणा है और राष्ट्र या विश्व के समग्र वातावरण से संबंधित है जहां उद्योग संचालित होता है। बाहरी कारक भी होते हैं जैसे राष्ट्र की अर्थव्यवस्था, सरकारी नीतियां आदि जो किसी भी संगठन के नियंत्रण से बाहर हैं। जब हम वृहत अर्थशास्त्र को वित्तीय प्रबंध से जोड़ते हैं, तो बैंकिंग प्रणाली, पूंजी बाजार, वित्तीय मध्यस्थ, भारतीय रिजर्व बैंक, मौद्रिक, राजकोषीय और आर्थिक नीतियां आदि शामिल हैं।

दूसरी ओर सूक्ष्म अर्थशास्त्र, संगठन का आंतरिक वातावरण है जो प्रकृति में नियंत्रणीय है। इसमें संगठन की प्रकृति और आकार, तरलता की स्थिति, संगठन का पैटर्न और स्वामित्व आदि शामिल हैं।

इन पहलुओं का विस्तार से अध्ययन करने पर पता चलता है कि वित्तीय प्रबंध किस प्रकार अर्थशास्त्र से निकटता से संबंधित है।

वित्तीय प्रबंध और लेखांकन

जैसा कि पहले चर्चा की गई वित्तीय प्रबंध के पारंपरिक दृष्टिकोण ने मूल रूप से फर्म के लेखांकन पहलू को लक्षित किया। वित्तीय प्रबंध के विकास के साथ, निर्णय लेने जैसे अन्य पहलू सामने आए। ऐसा कहा जाता है कि जहां लेखांकन समाप्त होता है, वहां वित्तीय प्रबंध शुरू होता है। यह स्पष्ट रूप से वित्तीय प्रबंध और लेखांकन के घनिष्ठ संबंध को दर्शाता है। इसे समझने के लिए आइए एक उदाहरण लेते हैं। हम जानते हैं कि लेखांकन आंकड़ों के संग्रह और रिपोर्टिंग से संबंधित है जबकि वित्त इन आंकड़ों को पढ़ने, इसका विश्लेषण करने और अंत में निर्णय लेने से संबंधित है।

उदाहरणः एक फर्म 'X' के एक वर्ष में निम्नलिखित लेन–देन हैं:

बिक्री – 10,00,000 रु.

बिक्री की लागत – 7,00,000 रु.

प्रारंभिक और अंतिम स्टॉक – शून्य

बिक्री से प्राप्ति – 2,00,000 रु.

आपूर्तिकर्ता को भुगतान – 6,00,000 रु.

आइए अब हम इसे लेखांकन दृष्टिकोण और वित्तीय दृष्टिकोण से देखें।

लेखांकन दृष्टिकोण (लाभ हानि खाता)	रूपये.	वित्तीय दृष्टिकोण (रोकड़ प्रवाह)	रूपये.
विक्रय	10,00,000	रोकड़ अंतर्वाह	2,00,000
घटा लागत	7,00,000	घटा रोकड़ बर्हिवाह	6,00,000
निवल लाभ	3,00,000	*निवल रोकड़ बर्हिवाह	4,00,000
		*यहां निवल रोकड़ बर्हिवाह रोकड़ अंतवाह से अधिक है।	

दोनों के परस्पर संबंध को इस प्रकार से देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न क

1) वित्तीय प्रबंध के विकास के अवस्थाओं की सूची बनाइए।

2) विभिन्न प्रकार के वित्त कार्य क्या हैं?

3) वित्तीय प्रबंध किस प्रकार संबंधित है:

(i) अर्थशास्त्र से

(ii) लेखांकन से

1.5 वित्तीय प्रबंध के उद्देश्य

वित्तीय प्रबंध के उद्देश्य इष्टतम निर्णय लेने के लिए एक ढांचा प्रदान करते हैं। वित्तीय प्रबंध के दो उद्देश्य हैं जो इस प्रकार हैं:

(i) लाभ अधिकतम करना (Profit Maximixation)

(ii) संपदा अधिकतम करना (Wealth Maximixation)

उद्देश्यों का अर्थ है किसी व्यवसाय के लक्ष्य तक पहुँचना। आइए इन पर चर्चा करें।

लाभ अधिकतम करना: सामान्य शब्दों में इसका अर्थ है फर्म की आय को अधिकतम करना। जब हम इस अवधारणा पर चर्चा करते हैं तो यह काफी अस्पष्ट है क्योंकि यह निम्नलिखित को स्पष्ट रूप से नहीं बताता :

क) लाभ क्या हैं?

ख) प्रति शेयर आय का निरपेक्ष मूल्य क्या है?

ग) क्या लाभ निवेश पर प्रत्याय है?

घ) क्या लाभ की गणना कर से पहले या कर के बाद की गई है?

प्रारंभ में यह उद्देश्य फर्म का मुख्य उद्देश्य था और इसके पक्ष में कई तर्क हैं। यदि कोई फर्म लाभ को अधिकतम करने की अवधारणा को अपनाती है तो प्रत्याय बाद के चरण में प्राप्त किया जाता है जो फर्म के वित्तीय स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं हो सकता है। वर्तमान समय में लाभ को अधिकतम करना भी फर्म की ओर से सामाजिक

रूप से जिम्मेदार निर्णय नहीं है। आइए इस दृष्टिकोण के कुछ पक्ष और विपक्ष को देखें।

पक्ष	विपक्ष
संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग किया गया	लाभ के समय के पैटर्न को अनदेखा करता है। अस्पष्ट और अनेकार्थी
फर्मों के प्रदर्शन का माप	मुद्रा के जोखिम और समय के मूल्य को अनदेखा करता है
समाज के हित में कार्य करता है	लाभों के गुणवत्ता पहलू की उपेक्षा करता है
आर्थिक दक्षता का परीक्षण	अवास्तविक
	सामाजिक रूप से जिम्मेदार व्यवहार की उपेक्षा करता है

लाभ अधिकतमकरण में 'जितना अधिक उतना बेहतर अवधारणा को अपनाया जाता है। आइए इसे तालिका 1.1 और 1.2 क्रमशः के माध्यम से समझते हैं।

तालिका 1.1: लाभ का समय–पैटर्न

समय अवधि	विकल्प A (रु. लाख में)	विकल्प B (रु. लाख में)
I	100	–
II	200	200
III	100	200
कुल	400	400

जैसा कि तालिका 1.1 में दिखाई देता है, विकल्प A और B से जुड़े कुल लाभ समान हैं। यदि फर्म लाभ अधिकतम करने का मानदंड पर विचार करती है, तो दोनों विकल्प समान रूप से अच्छे हैं क्योंकि दिन के अंत में दोनों समान लाभ कमाते हैं। लेकिन जैसा कि आप देख सकते हैं कि दानों विकल्प समान नहीं हैं क्योंकि अलग–अलग समय अवधि के दौरान आय अलग–अलग है। इससे पता चलता है कि कुछ निवेशों से प्राप्त लाभों के समय के पैटर्न की अनदेखी की जाती है। आइए अब दूसरा मामला देखें।

तालिका 1.2 : अपेक्षित लाभ के बारे में अनिश्चितता

(लाभ (रु. करोड़ों में)

आर्थिक विचार समय अवधि	विकल्प A	विकल्प B
मंदी	10	–
सामान्य	15	20
मूल्य वृद्धि	20	25
कुल	45	45

जैसा कि आप तालिका 1.2 में देख सकते हैं कि कुल पुनःलाभ समान हैं लेकिन लाभ अधिकतम का दृष्टिकोण काफी संकीर्ण है क्योंकि यह किसी भी विकल्प से जुड़े

जोखिम कारक या अनिश्चितता को अनदेखा करता है। यह मुदा के समय मूल्य की भी उपेक्षा करता है।

इस अवधारणा का विकल्प संपदा मूल्य में अधिकतमता है।

संपदा अधिकतमकरणः यह दृष्टिकोण लाभ अधिकतम करने की सीमाओं को दूर करने का प्रयास करता है। यह वित्तीय प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य है। प्रचालन रूप में इसका अर्थ है लाभों को अधिकतम करना, विनियोजित पूंजी पर प्रत्याय अधिकतम करना, प्रति शेयर आय या शेयर बाजार बाजार मूल्य में या लाभांश में वृद्धि, लीवरेज इष्टतम स्तर पर लाना और पूंजी की लागत को कम करना। यह वित्तीय प्रबंध के आधुनिक दृष्टिकोण में सार्वभौमिक रूप से स्वीकार किया जाता है। यह दृष्टिकोण जोखिम, उपयुक्तता और मुद्रा के समय मूल्य को ध्यान में रखता है। यह अवधारणा शेयरधारकों की संपदा को संदर्भित करती है जैसा कि बाजार में उनके शेयरों के मूल्य से प्रर्दशित होता है। इसका अर्थ है कि फर्म के शेयरों के बाजार मूल्य को अधिकतम करना। फर्म के निवल वर्तमान मूल्य की गणना निम्नानुसार की जा सकती हैः

$$W = \frac{A_1}{(1+k)} + \frac{A_1}{(1+k)^2} + \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots \frac{A_n}{(1+k)^n} - C$$

यहाँ

A_1, A_2 .....A_n समय की अवधि में किसी कार्रवाई के दौरान होने वाली रोकड़ प्रवाह की धारा;

W = फर्म का निवल वर्तमान मूल्य

k = जोखिम और समय मापने के लिए उपयुक्त बट्टा दर

C = परिसंपत्ति प्राप्त करने के लिए प्रारंभिक परिव्यय

इसलिए, हम कह सकते हैं कि संपदा अधिकतम करना अवधारणा :

स्पष्ट है

– जोखिम मापता है।

– मुद्रा का समय मूल्य मानता है

– सामाजिक रूप से जिम्मेदार है

यह उद्देश्य समय पर वित्तीय प्रबन्ध को तीन कार्यों निवेश, वित्तीयन तथा लाभांश निर्णयों को निर्देशित करता है। शेयरधारियों की सम्पदा के अधिकतम करना ही वित्त प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य है। लाभों को अधिकतम करना सम्पदा को अधिकतम करने का एक भाग मात्र है।

यहां एक बात ध्यान देने योग्य है कि यदि समय अवधि कम है और जोखिम न के बराबर है तो लाभ अधिकतम करना और संपदा अधिकतम करना लगभग समान हैं।

1.6 जोखिम और प्रत्याय समंजन

एक प्रतिभूति की कीमतों के दो मुख्य निर्धारक हैं। यह ये है:

– जोखिम

– प्रत्याय

यह कहा जाता है कि जितना अधिक जोखिम उतना ही अधिक प्रत्याय इसलिए जोखिम और प्रत्याय साथ चलते हैं।

वित्तीय प्रबंध में वित्तीय प्रबंधक के लिए इस अवधारणा को समझना बहुत महत्वपूर्ण है। यह निर्णय लेने के लिए एक मार्गदर्शक कारक है। जोखिम अनिश्चितता का माप है और इसे निवेश से अपेक्षित प्रत्याय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। आइए इसे एक उदाहरण के माध्यम से समझते हैं।

मान लीजिए सुश्री A ने एक सावधि जमा में 10,000 रुपये का निवेश किया है, जिसमें 3 वर्षों के लिए वार्षिक 6% का रिटर्न प्राप्त होता है। इसका अर्थ है कि सुश्री A सावधि जमा के परिपक्व होने तक ब्याज की एक निश्चित राशि के रूप में वार्षिक 600 रुपये अर्जित करेंगी।

अब मान लीजिए कि सुश्री A ने एक फर्म X के शेयर में उतनी ही राशि का निवेश किया है जो उसे लाभांश देगी। इस मामले में लाभांश बदलता है इसलिए परिवर्तनशील होता है। इसलिए यदि लाभांश बढ़ता है तो सुश्री A को उच्च रिटर्न मिलेगा। यद्यपि इस मामले में जोखिम अधिक है क्योंकि संभावना है कि कुछ मामलों में फर्म अच्छा प्रदर्शन नहीं कर सकती और सुश्री A को लाभांश नहीं मिल सकता यद्यपि जोखिम जितना अधिक होगा, प्रत्याय (रिटर्न) उतना ही अधिक होगा।

रिटर्न को निर्णय लेने वाले के द्वारा एक निश्चित अवधि में अपेक्षित लाभ (या हानि) के रूप में परिभाषित किया गया है। एक वित्तीय प्रबंधक को अधिक रिटर्न की चाह में जोखिम पर विचार करना पड़ता है, इसलिए उसे 'जोखिम और प्रत्याय के बीच समंजन' करना पड़ता है।

जोखिम और प्रत्याय समंजनः आइए इस अवधारणा को निम्नलिखित उदाहरण से समझते हैं: –

धारणाएं:

1. अपेक्षित आय = अपेक्षित रोकड़ प्रवाह

2. कोई कर नहीं

मान लीजिए सुश्री A के पास 1,00,000 रुपये है, जिसमें से 20,000 रुपये उसने 5% की दर से उधार लिए हैं। वह एक छोटा साइबर कैफे खोलना चाहती हैं। वार्षिक कुल परिचालन लागत 1,00,000 रुपये है और बिक्री 1,10,000 रुपये है। सुश्री A की वित्तीय और परिचालन स्थिति इस प्रकार है:

1 वित्तीयन – जोखिम और प्रत्याय	– ऋण 20,000 रुपये, ब्याज 1,000 रुपये – मालिक की पूंजी 80,000 रुपये, आय 9,000 रुपये
2 परिचालन – जाखिम और प्रत्याय	– परिचालन लागत 1,00,000 रुपये – रोकड़ विक्रय 1,10,000 रुपये

वर्ष के अंत में सुश्री A के पास 1,10,000 रुपये है और वह व्यवसाय में 1,00,000 रुपये का पुनर्निवेश करती है, 1,000 रुपये का ब्याज देती है और 9,000 रुपये की आय अपने पास रखती है।

यहा पर ध्यान दें कि प्रत्याय दो तत्वों का योग है क) यहां पर सुश्री A ने 10,000 रुपये की प्राप्त आय की और ख) 10,000 रुपये लेनदार तथा स्वामी सुश्री A के बीच बंट गये जिसने स्वामी की आय को प्रभावित किया। परिसम्पत्ति पर प्रत्याय दर के आधार पर सुश्री A ने 10% (10,000 / 1,00,000) प्राप्त किए और 11.25 % प्रत्याय दर (9,000 / 80,000) प्राप्त की। यह परिचालन और वित्तीयन कार्य कालापों का परिणाम है।

परिचालन से प्रत्याय दर सामान्यतः मार्जिन और विक्रय आवर्त द्वारा निर्धारित की जाती है। जो विक्रय, निवल प्रचालन आय तथा निवल प्रचालन परिसम्पत्तियों द्वारा प्रभावित होती है। मार्जिन की मात्रा को क) बिक्री की प्रचालन लागत बढ़ाकर या ख) प्रचालन लागत को कम करके बढ़ाया जा सकता है।

विक्रय की मात्रा को प्रचालन परिसम्पत्ति से ज्यादा विक्रय की मात्रा में वृद्धि करके या प्रचालन परिसम्पत्ति को विक्रय आवर्त (sales turnover) कम करके बढ़ाया जा सकता है। इसलिए स्वामी के लिए प्रव्याय की परिवर्तनशीलता के विरुद्ध अधिक लाभ बनाने के बीच संतुलन होना चाहिए।

हम इकाई 4 में जोखिम और प्रत्याय समंजन बंद की अवधारणा पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

1.7 वित्त प्रबंधक की भूमिका

एक वित्त प्रबंधक की एक चुनौतीपूर्ण भूमिका होती है। उसके दो कार्य हैं:

1. प्राथमिक कार्य
2. अन्य कार्य

वित्त प्रबंधक के कार्य

मुख्यतः	अन्य
पूंजी आवश्यकताओं का अनुमान	स्टॉक और प्राप्य के इष्टतम स्तर को बनाए रखना
आवश्यक कोषों की अधिप्राप्ति	निवेश का मूल्यांकन
कोषों का आवंटन	वित्तीय बातचीत
चालू परिसम्पत्तियों का प्रबंध	शेयर मूल्यों पर दृष्टि रखना
वित्तीय नियंत्रण	

एक वित्तीय प्रबंधक की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि उसे सभी वित्त कार्यों को ध्यान में रखना होता है जैसा कि निवेश निर्णय, वित्तीय निर्णय और लाभांश निर्णय। वित्तीय प्रबंधक का प्राथमिक कार्य इन वित्त कार्यों को देखना और फर्म की पूंजी आवश्यकताओं का आकलन करना है और फिर फंड के इष्टतम उपयोग के लिए उचित रूप से फंड आवंटित करना है। अन्य कार्यों के हिस्से के रूप में उसे बाहरी शक्तियों पर भी दृष्टि रखनी होती है ताकि उचित निर्णय लिया जा सके।

वित्त प्रबंधक को करना चाहिए :

- कोष प्राप्त करने के तरीके व माध्यम ज्ञात करना
- उचित निवेश निर्णय लेना
- वित्तीय पूर्वानुमान लगाना
- संगठन की तरलता स्थिति बनाए रखना
- संगठन के वित्तीय स्वास्थय का विशलेषण करना
- सगठन के कार्यक्षेत्र के लिए बजट तैयार करना
- प्राप्य और देय का प्रबन्धन करना
- फर्म की उचित साख नीति तैयार करना
- मूल्यह्रास और प्रतिस्थापन से संबंधित निर्णय लेना
- कोष संबंधित जोखिम से संबंधित निर्णय लेना

कुल मिलाकर वित्त प्रबंधक को संगठन के कोष की आवश्यकताओं का विश्लेषण, विवेचन तथा पूर्वानुमान करना होता है।

अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए एक वित्त प्रबंधक को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। यह चुनौतियों हो सकती हैं।

- शेयरधारकों के लिए मूल्य का सृजन करना क्योंकि आजकल शेयरधारक जागरूक हो गए हैं;
- निवेशकों का मनः स्थिति समझना, व्यक्ति तथा संस्थान दोनों की;
- बाजार जोखिम का प्रबन्धन करना;
- वित्त प्रबन्धक को स्मार्ट होना चाहिए इसका अर्थ यह कि उसके पास कुशल पारस्परिक और संप्रेषण होनी चाहिए तथा संगठन के विषय में पूरी जानकारी भी होनी चाहिए।

बोध प्रश्न ख

1 वित्त प्रबंध्ध के कार्यों को बताइए।

2 संपदा अधिकतम करना क्या होता है?

1.8 सारांश

अब हम समझ गये है कि वित्त और प्रबंध का योग वित्तीय प्रबन्ध हैं। यह कोषों को प्राप्त करने तथा उनको बुद्धिमानी से इष्टतम उपयोग के लिए आबंटित करता है। वित्तीय प्रबंध का विकास तीन अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है। (i) पारंपरिक अवस्था (ii) माध्यमिक अवस्था और (iii) आधुनिक अवस्था। वित्तीय प्रबंध की प्रकृति में तीन कार्य शामिल है i) निवेश ii) वित्तीयन और iii) लाभांश। वित्तीय प्रबन्ध का मुख्य लक्ष्य है शेयरधारक की संपदा को अधिकतम करना क्योंकि यह मुदा के समय मूल्य को तथा उसके साथ संबंधित जोखिमों को भी शामिल करता है। हमने जोखिम तथा प्रत्याय समंजन का भी विवेचन किया है। वित्तीय प्रबन्धक को जोखिम और प्रत्याय में सामजस्य बैठाना चाहिए। एक वित्तीय प्रबन्धक की भूमिका हैः 1) अपेक्षित पूंजी राशि का अनुमान लगाना 2) वित्त सरंचना निर्धारित करना 3) वित्त के स्रोतों का चयन करना 4) कोष जुटाना 5) कोष आंबंटित करना 6) कोषों का उपयोग करना इत्यादि।

1.9 शब्दावली

वित्त प्रबंध : कोषों को प्राप्त करना, वित्तीयन करना व उनका प्रबन्ध करना।

लाभ अधिकतम करना : फर्म का लाभ अधिक करना

संपत्ति अधिकतम करना : शेयर धारक की संपदा का मूल्य बढ़ाना

जोखिम : अनिश्चितता का माप

प्रत्याय : एक समय अवधि में अपेक्षित लाभ/हानि।

1.10 स्वपरख प्रश्न

1) मुद्रा व वित्त में अन्तर कीजिए।
2) वित्त प्रबन्ध क्या है ?
3) वित्त प्रबंध एक अध्ययन विषय के रूप में किस प्रकार उभरा है?
4) वित्त प्रबंध के दोनों उद्देश्यों की चर्चा कीजिए।
5) जोखिम व प्रत्याय की संकल्पना का वर्णन कीजिए।
6) वित्त प्रबंधक की भूमिका चर्चा कीजिए।

नोटः ये प्रश्न आपके अभ्यास के लिए हैं। इनके उत्तर लिखने का अभ्यास करें किंतु उत्तरों को विश्वविद्यालय में मूल्यांकन के लिए न भेजें। प्रश्नों के उत्तर लिखकर आप स्वयं अपनी प्रगति की की जाँच कर सकते हैं।